International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(2): 68-70

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(2): 68-70
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 10-01-2021
Accepted: 12-02-2021

**प्रियंका**
शोधच्छात्रा, संस्कृतविभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
भारत

**Corresponding Author:**
**प्रियंका**
शोधच्छात्रा, संस्कृतविभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
भारत

# पाणिनीय गणपाठगत शब्दों के अर्थ एवं प्रयोग

## प्रियंका

**सारांश**
भाषा ही समस्त लोक व्यवहार का आधार होती है। सचेतन मनुष्यों द्वारा प्रयुक्त भाषा में निरन्तर विकास की प्रक्रिया चलती रहती है। शब्द भाषा की मूल इकाई होते हैं। शब्द का महत्व अर्थो द्वारा प्रस्फुटित होता है। अर्थ को शब्द की आत्मा माना गया है। शब्दों के अर्थविकास (अर्थविस्तार, अर्थादेश, अर्थसंकोच) में परिवेशगतभिन्नता, ज्ञानवैविध्य, भावात्मकता, साहचर्य, सादृश्यादि प्रमुख कारण होते हैं। एक ही शब्द भिन्न–2 धातुओं से सिद्ध होने पर भिन्नार्थ देने वाला होता है। किसी भी प्रकरण में शब्दार्थ का निर्धारण प्रयोग द्वारा ही हो सकता है। वक्ता की विवक्षा की भी महती भूमिका होती है। शब्दों के अर्थविकास में कालक्रम प्रमखतया कारण होता है। गणपाठगत शब्दों का प्रयोग प्राचीनकाल में प्रयुक्त अर्थो से भिन्न अर्थो में भी देखा जाता है। गणपाठगत शब्दों के अर्थ एवं प्रयोग का विस्तृत अध्ययन आचार्य पाणिनि द्वारा प्रयुक्त शब्दों के यथार्थ स्वरूप को उपस्थित करेगा। अतः इस शोधपत्र में गणपाठ में प्रयुक्त शब्दों के अर्थविकास पर व्यापक दृष्टिकोण उपस्थित करने का प्रयास किया गया है।

**कुटशब्दः** पाणिनीय गणपाठगत शब्दों, अर्थविकास, अर्थविकास

## प्रस्तावना
पाणिनीय व्याकरण का पंचांगत्व प्रसिद्ध है। गणपाठ यहाँ अभिन्न अंग के रूप में प्राप्त होता है। आचार्य पाणिनि से पूर्व प्रतिपदपाठ व्यवस्था के संकेत भी मिलते हैं। पाणिनि ने अध्येताओं के सौविध्य तथा शास्त्र लाघव के लिए गणों को निर्धारण किया। किसी गण से विहित प्रत्ययादि कार्य गणान्तर्गत सभी शब्दों से हो जाता है। पाणिनि ने अष्टध्यायी की रचना से पूर्व गणपाठ का निर्धारण किया था। ऐसा महाभाष्यकार पंतजलि के वचनों से ज्ञापित होता है। पाणिनिय गणपाठ पर किसी प्राचीन टीका ग्रन्थ अथवा व्याख्या ग्रन्थ का सर्वथा अभाव है। सम्प्रति पठन–पाठन व्यवस्था में गणपाठ का निर्देश मात्र कर दिया जाता है। गणपाठगत शब्दों के अर्थविस्तार तथा प्रयोगादि पर पाठकों का ध्यान नही जाता है।
पाणिनीय गणपाठ में नानार्थक शब्द अत्याधिक मात्रा में मिलते हैं। शब्दों की नानार्थकता उनके अर्थ विकास की परिचायक है। किसी भी पदार्थ के लिए शब्दप्रवृत्ति उसमें वर्तमान क्रियाविशेष अथवा गुणविशेष के कारण होती है। प्रकरण विशेष में वक्ता की विवक्षा से भी अर्थ में भेद देखने को मिलता है। जब शब्द का प्रयोग विशेषण के रूप में होता है तब मुख्यार्थ गौण तथा गौणार्थ मुख्य हो जाता है। शब्दों के स्वरभेद तथा लिंग भेद से भी अर्थो में परिवर्तन प्रयोग में देखने को मिलता है।
साहित्य शास्त्र में सादृश्य के कारण शब्दों के अर्थ में परिवर्तन बहुलतया देखा जाता है। अभिधा लक्षणा व्यंजना शक्तियों के सामर्थ्य से भी एक ही शब्द भिन्न–भिन्न अर्थो को कहता है। इन शब्दशक्तियों के संयोगादि कारणों से भी अर्थ परिवर्तन देखने को मिलता है।
भाषा सम्बन्धी ज्ञान को अर्जित करने का उद्देश्य शब्दों के अर्थ एवं प्रयोग को यथावत् रूप में जानना ही है। शब्दार्थसम्बन्ध के ज्ञान में प्रयोग परम प्रमाण है। अतः यहाँ शब्दों के अर्थविस्तार को प्रयोगों सहित दिखाया जा रहा है।

**वाहः** ''वाह अश्वः''[1] वाह शब्द घोड़े के लिए प्रसिद्ध है। अन्य पश्वादि तथा वाहन जिनसे वहन किया जाए, उनके लिए भी वाह शब्द प्रयोग में देखा जाता है। वहन गुण से साधर्म्य के कारण विद्या का वहन करने वाले वेद के लिए भी वाह शब्द प्रयोग में मिलता है। यथा – ''शंसावाध्वर्यो प्रति में गृणीहीन्द्राय वाहः कृणवाम जुष्टम्।।[2] अमरकोश[3] में वाह शब्द परिमाणवाची पढ़ा है। प्राकृत भाषा[4] में वाह शब्द धारण करने वाला तथा ले जाने वाला इन अर्थो में मिलता है। धारण, वहन गुण से साधर्म्य के कारण वाष्प के लिए वाह शब्द प्रयोग में मिलता है क्योंकि वह जलकणों को धारण करने वाला तथा ले जाने वाला होता है।

गाहासत्तसई[5] ''अच्छिणिमीलणेण पम्हाट्ठिओ वाहो'' (संस्कृत छाया – अक्षिनिमीलनेन पक्ष्मस्थितो वाष्पः)।

**लवणः** ''लुनातीति लवणः राक्षसविशेषः। क्षारविशेषो लवणम्''[6] उपर्युक्त लवण के द्रव्यवाचक अर्थ हैं। लवण शब्द विशेषण रूप में प्रयुक्त गुणविशेषों का अभिधान करता है। 'लवणं क्षीरं, लवणं पानीयम्''[7] यहाँ लवण शब्द क्षार को न कहकर क्षीर के स्वादुत्व को बता रहा है। गाहासत्तसई[8] ''सुभग सलवणेनापि किं तेन स्नेहो यत्र नास्ति'' यहाँ लवण शब्द अभिधा से नमक (क्षार) का वाचक है परन्तु व्यंजना शक्ति द्वारा यहाँ लवण शब्द से सौन्दर्य अभिव्यंजित हो रहा है। कुमारपालचरितम्[9] – ''तस्सोऽभमिअं लवण सुकुमाल मऊह – मालिस्स'' (दर्शनीयद्युतिधारिणः तस्य राज्ञः लवणम् उद्भ्रमितम् उत्तारितम्) यहाँ लवण शब्द स्पष्ट रूप से सौन्दर्याभिधायक है। कुमारपालचरितम[10] ''गिरी तरू वा जल–सलोणा'' (यतो गिरयस्तरवो वा जलेन सलवणा लावण्योपेता भवन्ति) लवण शब्द के सौन्दर्याभिधायक होने के साधर्म्य से ही लवण शब्द हरे–भरे वृक्षों के लिए प्रयोग हुआ है।

**मेघः** मेघ शब्द बादल का वाचक है। 'मेघः कस्यात्? मेहतीति सतः[11] मिह सेचने इस धात्वर्थानुसार ''मेहति सिंचतीति मेघः ''इस प्रकार कहा जा सकता है। महाभाष्य[12] – ''महिदानकर्मा'' मिहरपि मह्मर्थे' मिह धातु मह्मर्थक (दानकर्मार्थक) भी है। मेघ भी जल का दान करने वाले होने से मेघ कहलाते हैं। मिह शब्द भी बादल के लिए प्रचलित रहा होगा सम्प्रति इसका प्रयोग वर्षा के लिए किया जाता है। यहाँ मूल धातु ''मिह'' तथा व्युत्पन्न शब्द ''मेघ'' दोनों भिन्न–2 अर्थो में प्रचलित हो गए हैं।

**सोढः** सोढ शब्द सहन किया अथवा भुगता गया इन अर्थो में कोश में मिलता है।[13] वाक्यपदीय में सोढ शब्द अर्थपूर्वक समझे जाने के लिए प्रयोग किया है – ''यथानुवाकः श्लोको वा सोढ़त्वम् उपगच्छति।''[14] (सोढत्वम् बुद्धिवहनीयत्वम्) जिसको बुद्धि द्वारा सहन किया जा सके अर्थात् उसको समझा जा सके। इसके अतिरिक्त सोढ़ शब्द का अनुभव अर्थ में भी प्रयोग देखने को मिलता है। गाथासप्तशती[15] ''दृष्टाश्चूताः आघ्राता सुरा दक्षिणानिलः सोढ़ः'' त्र दक्षिणी हवा का अनुभव किया।

**बालः** बालो बलवर्ती, भर्तव्यो भवति अम्बास्या अलं भवतीति वा अम्बास्यै बलं भवतीति वा बलो वा प्रतिषेधव्यवहित''[16] बाल शब्द सामान्यतया शिशु, अबोध बालक के लिए प्रयोग किया जाता है। अनभिज्ञ पुरूष के लिए भी बाल शब्द प्रयोग में मिलता है। वालबीजनिया (बालवीजनेन)[17] प्राचीन काल में हवा करने के लिए पंखे बालों के द्वारा बने होते थे। संभवतः इसी साधर्म्य से बाल शब्द हवा के लिए भी प्रयोग किया जाता है। बाल शब्द केशों के लिए भी प्रचलित है।

**छात्रः** छत्र शब्दं से अण् प्रत्ययान्त रूप छात्र है। ''छत्रशीलश्छात्रः छत्रस्येव शीलमस्येत्यर्थः''[18] सामान्यतया किसी भी छत्रधारी अथवा छत्रस्वभाव वाले के लिए छत्र शब्द प्रयोग किया जा सकता है। महाभाष्य[19] ''गुरूणा शिष्यश्छत्रवत् छाद्यः शिष्येण च गुरुश्छत्रमिव परिपाल्यः ''जिस प्रकार छत्र उष्णादि का निवारण करता है। उसी प्रकार गुरू अज्ञान का निवर्तक होने के सादृश्य से गुरू को छात्र कहा है। ''तच्छीलानुकारिशीलः शिष्यश्छात्र इत्युच्यते गुरूशील इत्यर्थ''[20] अथवा छत्रं शीलस्य छात्रः। छत्रमिव गुरोः सुखहेतुरित्यर्थः''[21] इस प्रकार छात्र शब्द गुरू व शिष्य दोनों अर्थो को समाहित किये हुए है। सम्प्रति छात्र शब्द केवल शिष्य अर्थ में संकुचित हो गया है। वृहद्वृत्ति[22] – ''छत्रशब्देन गुरू – कार्येष्ववहितस्य शिष्यस्य छत्रक्रियातुल्या गुरूच्छिद्राच्छादनादपायरक्षणादिका क्रियोच्यते उपचारात्।'' यहाँ छात्र शब्द शिष्य को ही कह रहा है परन्तु यह परिभाषा महाभाष्य की परिभाषा से सर्वथा विपरीत जान पड़ती है।

**शमीः** ''शमोऽस्यास्तीति शमी''[23] शमी शब्द तरू के लिए प्रसिद्ध है क्योंकि यह रोगों का शमन करने वाला होता है। साधर्म्य से अन्य धान्यो के लिए भी शमी शब्द का प्रयोग मिलता है। अमरकोश[24] ''माषादयः शमीधान्ये''। शमी धार्मिक साधना का सूचन शब्द भी है।[25] इसमें बुरे कर्मो का उपशमन तथा अच्छे कर्मो का अभ्यास किया जाता है। ऋग्वेद[26] – शमी शशमानस्य'' यहाँ शमी शब्द उत्तम कर्मो को कह रहा है। निरूक्त में शमी कर्म वाची नामों में पढ़ा गया है।[27] किरातार्जुनीयम[28] ''कथं न मन्यु ..... शमीतरू शुष्कमिवाग्निरूच्छिश्वः''। यहाँ शमी शब्द विशेषणरूप में है और शीघ्र ज्वलन स्वभाव को ही कह रहा है।

**अर्गलः**''अरेण कर्षणेन गलति अर्गला दारूमयो लोहमयो वा दण्डः'' वामनाद्यास्त्वर्गल इति पेठुः''[29] अर्गल अथवा अर्गला प्रतिपादिक का अर्थ द्वार, वातायनादि में लगायी गई साँकल अथवा चटखनी से है। इसी साधर्म्य से अन्य अवरोधक अर्थ ज्ञापित करने के लिए भी अर्गला शब्दप्रयोग में मिलता है। व्याकरणचन्द्रोदय[30] – ''ऐतदात्म्यमिदं शास्त्रं प्रस्मृत्येदं निरर्गला।'' शिशुपालवध[31] – ''अनुगतनयमार्गामर्गलां दुर्नयस्य'' अर्गला शब्द का यहाँ निवारण करने वाली, दुर्नय को हटाने वाली अर्थ में प्रयोग किया गया है।

**अष्टकाः** ''पाणिनीयमष्टकं सूत्रं तदधीते अष्टकाः पाणिनीयाः[32] पाणिनि के समय अष्टका का अर्थ ग्रन्थ विशेष था किन्तु कालान्तर में वार्तिककार कात्यायन ने अष्टका शब्द को पितरो के लिए किये जाने वाले श्राद्धकाल के लिए प्रयोग किया है। ''अष्टका पितृदैवत्ये''[33] सम्प्रति अष्टका की उपेक्षा पाणिनियाष्टक प्रचलित है, अष्टका शब्द उन अष्टमियो के लिए प्रचलित है जबकि पितरों का तर्पण होता है।

**वर्णः** ''वृणाति व्रियते वा यः सः वर्णः ब्राह्मणादिः, शुक्लादिः, अक्षरं वा''[34] वर्ण शब्द क्रियारूप में प्रयुक्त विविध अर्थो को ज्ञापित करता है। ''वर्णैः वणयति' (वर्ण–रंगना) 'कथां वर्णयति'' (वर्ण त्र विस्तार करना) राजानं वर्णयति (वर्ण त्र स्तुति)[35]। किरातार्जुनीय[36] – 'वर्णः प्रशस्तिः अष्टविधमैथुनाभावः प्रशस्तिः। ब्रह्मचर्य[37] में भी अष्टविध मैथुन का अभाव होने से वर्णशब्द ब्रह्मचर्य का वाचक हुआ है।

**वल्गुः** ''वलते संवृणोतीति वल्गु त्र शोभा[38]। वल्गु शब्द मनोहर, प्रिय सुन्दरादि अर्थो का वाचक है। अर्जुनरावणीयम्[39] – ''आकृष्टक्ष्मातखड्गेन वल्गता वल्गु रक्षसा। शात्रवी सकला सेना प्रापिता तेन विस्मयम्।'' वल्गु यहाँ रक्षस् का विशेषण है जो पराक्रमादि गुण का वाचक हैं।

**बलः** ''स्थौल्यसामर्थ्यसैन्येषु बलं[40] बल शब्द से बलवान् मतुप् अर्थ भी प्रयोग में मिलता है। वृहद्देवता[41] ''स्तुतेः प्रभुत्वं सर्वस्य बलस्य निखिला कृतिः'' यहाँ बल से बलवान अर्थ अभिधेय है। बल शब्द निर्धारण तथा निश्चय अर्थो को भी धोतित करता है।[42] निश्चित अर्थ का वाचक है।

**अभ्रः** अभ्र शब्द मेघ के लिए प्रयोग किया जाता है। छान्दोग्योपनिषद्[43] – ''यथेतमाकाशम्। आकाशाद्वायुः। वायुर्भूत्वा धूमो भवति। धूमो भूत्वाभ्रं भवति। अभ्रं भूत्वा मेघो भवति। मेघो भूत्वा प्रवर्षति'' यहाँ अभ्र शब्द मेघ का नहीं अपितु मेघ की पूर्वावस्था का वाचक है। ''वरिसाविहोणा मेहा हुंति अब्भो''[44] वर्षा उत्पन्न न करने वाले मेघों को अभ्र कहा गया है। अर्जुनरावर्णाय[45] – ''अमूढ़चेताः प्रविगाहसे त्वं रवी रथेनाभ्रमिवारिसैन्यम्'' 'अभ्र'' यहाँ आकाश का वाचक है।

**स्पर्शः** ''स्पृशतीति स्पर्शो व्याधिविशेषः''[46] स्पर्श शब्द अच् प्रत्ययान्त कर्तृवाचक अन्तोदात्तस्वर होने पर स्पर्श करने वाला इस अर्थ का वाचक है। स्पर्श शब्द घ्रु प्रत्ययान्त धातुसाधित आधुदात्त स्वर होने पर रोग तथा ऊष्मा इस अर्थ का वाचक है। यहाँ स्वरभेद से अर्थ में परिवर्तन होता है।[47]

**गणितः** ''गणिती ज्योतिषी[48] गणित ज्योतिषशास्त्र के अन्तर्गत अभिन्न विद्या है। गाथासप्तशती[49] ''पादपतितो न गणितः'' गणित शब्द विद्या विशेष अथवा गणना का वाचक न होकर अवमानना का ही द्योतन कर रहा है।

**अञ्जनः** अञ्जन शब्द काजल, काला, दिशा, पर्वतादि अर्थो का वाचक है।[50]। अञ्जेरञ्जनम्,
अञ्जनं च प्रकाशनम् कथम् अञ्निञ्चत्यर्थे वर्तते? अनेकार्था अपि धातवो भवन्तीति[51] अञ्जन शब्द प्रकाशित करने वाला इस अर्थ का भी द्योतक है।

**विनयः** विनये क्रमणानां शास्त्राय क्रमते स्म धीः।।[52] यहाँ विनय से नम्रतादि क्रिया अभिधेय है। 'प्रत्यानिनीषुः विनयेन रामं''[53] विनय यहाँ प्रसादन क्रिया का वाचक है। विनयशील अर्थ का भी वाचक है तथा धार्मिक उपाधि विशेष भी है। विनय पिटक[54] में विनय शब्द नियम अर्थ को द्योतित करता है।

**गौरः** ''अवदातः सितो गौर वलक्षो धवलोऽर्जुन''[55] गौर शब्द वर्णवाची है। विशेषण रूप में प्रयुक्त गौर शब्द ब्राह्मणादि के अन्यतम् गुण को कहता है। गौरः – शुच्याचारः अनुपहताचारः[56] अर्जुनरावणीय(57) – ''यशः क्षौममिवेन्दुगौरम्'' गौरशब्द वर्णवाची न होकर शुभ्र उज्ज्वलादि अर्थ को प्रकट कर रहा है।

**क्षामाः** ''क्षामा भिन्दन्तो अरूणीरप[58] क्षामेति पृथिवीनामसु निघण्टौ यहाँ मूलतः क्षाम शब्द है जो कि संहिता पाठ के कारण क्षामा हो गया है। क्षाम शब्द पृथिवी वाची है। क्षाम शब्द विशेषण रूप में सूखा, झुलसा, कृशादि अर्थो को कहता है[59]। भट्टिकाव्य[60] ''क्षामामञ्जन् पिण्डाऽऽभा दण्डिनीमजिनाऽऽस्तराम्'' क्षामा शब्द यहाँ स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है जोकि कृश अर्थ को ही कह रहा है।

**हव्यः** हव्य शब्द आहुति देने योग्य पदार्थ का वाचक है। सभी पदार्थ जिनकी आहुति दी जा सके हव्य से अभिधेय हैं। ऋग्वेद[61] ''इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे .... क्षेमे योगे हव्य इन्द्रः'' हव्य शब्द यहाँ प्रार्थनीय अर्थ को द्योतित कर रहा है। प्राकृत में हव्य शब्द शीघ्रार्थ को द्योतित करता है ''इह हव्यम् आगच्छति'' (यहाँ शीघ्र आता है)[62]।

**तूस्तः** ''तूस्तानि विहन्ति वितूस्तयति तूस्तं केश इत्येके। जटीभूताः केशा इत्यन्ये। पापमित्यपरे[63] तूस्त शब्द केश, जटाओ अथवा पाप का वाचक है। सरस्वतीकण्ठाभरण[64] – वस्त्रस्य तूस्तानि विहन्ति वितूस्तयति वस्त्रम्'' यहाँ तूस्त शब्द धूलि को कह रहा है। वितूस्तयति केशान्। विशदीकरोतीत्यर्थः[65] क्रियारूप में प्रयुक्त तूस्त शब्द विशदीकरण को कह रहा है।

## संदर्भग्रन्थसूची


1. गणरत्नावली (5.1.20)
2. निरूक्त (पृष्ठ 268)
3. अमरकोश (2/19/88)
4. प्राकृत शब्दकोश (पृष्ठ1323)
5. गाहासत्तसई (4/67)
6. गणरत्नावली ((5.1.123)
7. महाभाष्य (भाग–4, पृष्ठ233)
8. गाहासत्तसई (4/16)
9. कुमारपालचरितम् (2/14)
10. कुमारपालचरितम् (4/36)
11. निरूक्त (पृष्ठ 149)
12. महाभाष्य (भाग5, पृष्ठ28)
13. प्राकृत शब्द कोष ( पृष्ठ1646)
14. वाक्यपदीय (1.82)
15. गाथासप्तशती (2/97)
16. निरूक्त ( पृष्ठ571)
17. पालिप्रवेशिका ( पृष्ठ159)
18. गणरत्नमहोदधि ( पृष्ठ410)
19. महाभाष्य (4/4/62)
20. गणरत्नमहहोदधि ( पृष्ठ410)
21. चान्द्रव्याकरण (1.2.96)
22. बृहदवृत्ति (6.4.60)
23. चान्द्रव्याकरण (1.2.96)
24. अमरकोश (2/19/24)
25. सिद्धहैयशब्दानुशासन (3/2/142)
26. ऋग्वेद (4/22/8)
27. निरूक्त ( पृष्ठ 673)
28. किरातार्जुनीयम् (1/32)
29. गणरत्नमहोदधि (अनूपदिगण) (पृष्ठ 391)
30. व्याकरणचन्द्रोदय (1 श्लोक)
31. शिशुपालवध (2/118)
32. काशिका (4/2/65)
33. काशिका ((7/3/45)
34. उणादि (3.10)
35. व्याकरणचन्द्रोदय (भाग–3) ( पृष्ठ 195)
36. किरातार्जुनीय (1/1)
37. हेमशब्दानुशासन (7/2/69)
38. उणादिप्रयोगदीपिका (1/19)
39. अर्जुनरावणीयम् (18/41)
40. अमरकोश (3/23/195)
41. बृहद्देवता (2/6)
42. कुमारपालचरित (4/6)
43. छान्दाग्योपनिषद (5.10.5, 6)
44. प्राकृत शब्दकोश ( पृष्ठ169)
45. अर्जुनरावणीय (26/2)
46. चान्द्र व्याकरण (1/3/7)
47. भोजदेवकृत सरस्वतीकण्ठाभरण ( पृष्ठ136)
48. गणरत्नमहोदधि (इष्टादिगण)
49. गाथासप्तशती ( पृष्ठ 3/32)
50. प्राकृत शब्दकोष
51. महाभाष्य (भाग–6) (8.2.48)
52. द्वयाश्रयमहाकाव्य (7/28)
53. भट्टिकाव्य (3/36)
54. विनयपिटक (पृष्ठ 1)
55. अमरकोश (1.5.13)
56. महाभाष्य (भाग–4) ( पृष्ठ 287)
57. अर्जुनरावणीय (26/6)
58. ऋग्वेद (4/2/16)
59. प्राकृतशब्दकोश ( पृष्ठ510)
60. भट्टिकाव्य (6/60)
61. ऋग्वेद (10.86.10)
62. प्राकृत प्रवेशिका ( पृष्ठ124)
63. सिद्वान्तकौमुदी (भाग–2) ( पृष्ठ232)
64. सरस्वतीकण्ठाभरण (1.3.47)
65. काशिका (3.1.21)